فروری ۲۰۰۹ء

ماہنامہ شعاع عمل لکھنؤ

قَالَ اللّٰہُ تَبَارَکَ وَتَعَالیٰ قَدْ جَاءَ کُمْ مِنَ اللّٰہِ نُوْرٌ وَ کِتَابٌ مُبِیْنٌ

بے شک تمہارے پاس اللہ کی طرف سے نور آیا ہے اور روشن کتاب

علی علیہ السلام



موسسہ نور ہدایت حسینیہ غفران مآب لکھنؤ۔۳

R.N.I. No. UPBIL/2004/13526
Postel Regd.No. SSP/LW/NP-75/2008-10
P.O. Chowk, Dispatch Date: 2 & 6 of Every Month

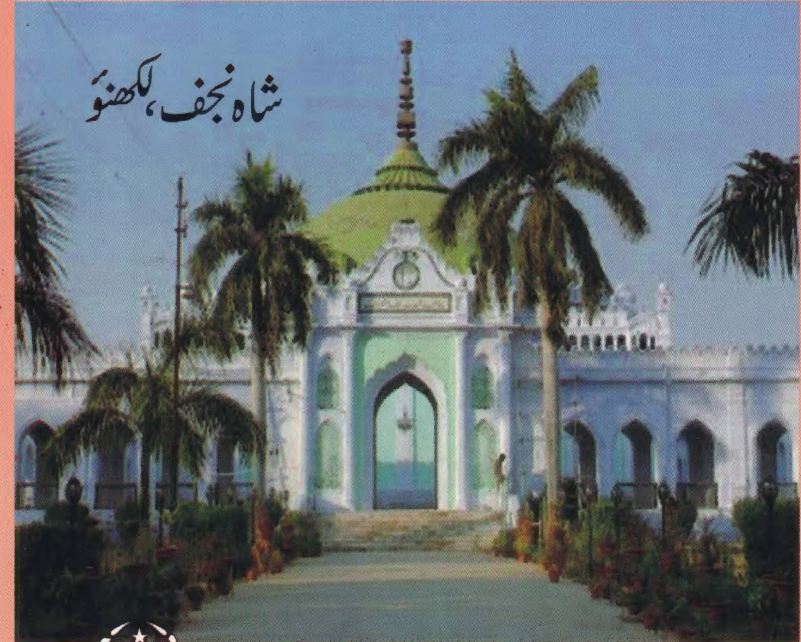
SHUA-E-AMAL

February 2009

Lucknow

शुआ-ए-अमल

हिन्दी, उर्दू मासिक पत्रिका लखनऊ





NOOR-E-HIDAYAT FOUNDATION

Imambara Ghufran Maab, Chowk LUCKNOW-3 (U.P.) INDIA, Phone : 2252230

वर्ष-5

R.N.I. No. UPBIL/2004/13526
Postal Regd No-SSP/LW/NP-75/2008-10
P.O. Chowk. Dispatch Date: 2 & 6 of every month

अंक - 8

फ़रवरी - 2009

नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन की
हिन्दी, उर्दू मासिक पत्रिका

शुआ-ए-अमल

"लखनऊ"

संरक्षक

मौलाना सै. कल्बे जवाद नक़वी साहब

सम्पादक

सै. मुस्तफ़ा हुसैन नक़वी 'असीफ़' जायसी

सलाहकारी परिषद

प्रोफ़ेसर अल्लामा सै० अली मुहम्मद नक़वी, प्रोफ़ेसर सै० हुसैन कमालुद्दीन अकबर,
प्रोफ़ेसर सै० इमरान हैदर, मु० र० आबिद, सैय्यद समीउल हसन वसीम, तज़हीब नगरौरी

वार्षिक - 200 रु | मिलने का पता | क़ीमत - 20 रु

नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन
इमामबाड़ा हज़रत गुफ़रानमआब मौलाना कल्बे हुसैन रोड
चौक लखनऊ - 3 (उ.प्र.) भारत। फोन न० 0522-2252230

सै. कल्बे जवाद नक़वी प्रिन्टर, पब्लिशर और प्रोपराइटर ने मासिक शुआ-ए-अमल (उर्दू, हिन्दी) निज़ामी आफ़सेट प्रेस विक्टोरिया स्ट्रीट लखनऊ से छपवाकर आफ़िस नूर-ए-हिदायत फ़ाउण्डेशन इमामबाड़ा गुफ़रानमआब मौलाना कल्बे हुसैन रोड लखनऊ-3 से प्रकाशित किया। सम्पादक : सै० मुस्तफा हुसैन नक़वी 'असीफ जाएसी'।

R.N.I. No.
UPBIL/2004/13526

Postal Regd. No.
SSP/LW/NP-75/2008-10

WEBSITE:
www.noorehidayat.com
www.al-ijtihaad.com

E_mail:
noorehidayat.@yahoo.com
noorehidayat.@gmail.com

ज़रे सालाना

1- यूरोप, अमरीका, कनाडाः
60 अमरीकी डालर
2- ख़लीजी मुमालिकः
50 अमरीकी डालर
3- एशिया, पाकिस्तानः
30 अमरीकी डालर
4- पाकिस्तान ज़मीनी डाकः
15 अमरीकी डालर

FORM-IV
(See Rule No-8)

1. Place of Publication:	Noorehidayat Foundation Imambara Ghufranmaab, Maulana Kalbe Husain Road, Chowk, Lucknow
2. Periodicity:	Monthly
3. Printer's Name:	Syed Kalbe Jawad Naqvi
Whether citizen of India:	Yes
Address:	39, Jauhari Mohalla, Chowk, Lucknow
4. Publisher's Name:	Syed Kalbe Jawad Naqvi
Whether citizen of India:	Yes
Address:	39, Jauhari Mohalla, Chowk, Lucknow
5. Editor's Name:	Syed Mustafa Husain Naqvi
Whether citizen of India:	Yes
Local Address:	Imambara Ghufranmaab, Maulana Kalbe Husain Road, Chowk, Lucknow
Permanent Address:	Mohalla Syedana, Qasba Jais, Distt. Raibareli (U.P.)
6. Owner's Name:	Syed Kalbe Jawad Naqvi
Whether citizen of India:	Yes
Address:	39, Jauhari Mohalla, Chowk, Lucknow

I Syed Kalbe Jawad Naqvi, hereby declare that the particulars given are true and correct to the best of my knowledge and belief.

Syed Kalbe Jawad Naqvi

Printer and Publisher

Lucknow
Date: 06-02-2009

फ़ेहरिस्ते मज़ामीन

फरवरी-2009ई० /सफ़र-रबीउल अव्वल 1430हि०

इस्लाम और कर्बला

उमदतुल उलमा आयतुल्लाह सै० कल्बे हुसैन साहब क़िब्ला

"इस्लाम ज़िन्दा होता है कर कर्बला के बाद"

इसमें शक नहीं कि मिस्टर मुहम्मद अली जौहर हिन्दुस्तान की सरज़मीन पर मौजूदा सियासत का एक रौशन सितारा बन के ज़ाहिरी इस्लाम के उफ़ुक़ पर चमके और बहुत नाम और मरतबा के बाद इस्लामियात को बहुत दुनियावी फ़ायदा पहुँचाकर नावक़्त ग़ुरूब कर गये। दुनियावी हैसियत से मौसूफ़ ने बड़े-बड़े काम अन्जाम दिये जो मौजूदा सियासत की तारीख़ में हमेशा यादगार रहेंगे। मगर यह लाज़िम तो नहीं है कि जो दुनियावी मामलों में बुलन्द निगाह हो वह मज़हब का भी वैसा ही आलिम हो। इसी बिना पर मैं पूरी कुव्वत के साथ कह सकता हूँ कि मिस्टर मुहम्मद अली ने इस मिस्रे में बड़ी से बड़ी ग़लती की है। बल्कि कर्बला के बेमिसाल वाक़िआत बल्कि हक़ीक़ते इस्लाम ही से अज्ञानता का मुकम्मल सुबूत दिया है। ये जानबूझकर हो या नासमझी से शहादत हुसैनी की तौहीन की है। इसमें शक नहीं कि क़ुरआन पाक की आयते करीमा "इन्नद्दीना इन्दल्लाहिल इस्लाम" ख़ुदा के नज़दीक तो बस एक ही दीन है यानी इस्लाम। इस्लामी तालीमात के मुताबिक़ अव्वल नक़्शे इन्सानियत और सरीर आराए मस्नदे ख़िलाफ़त व नुबुव्वत जनाब आदम थे सबसे पहले ऑहज़रत[अ०] ने इस ज़मीन पर इस्लाम का बीज बोया और आपके बाद एक लाख चौबीस हज़ार नबियों और रसूलों ने और उनके वसियों ने आबयारी करके इस्लाम के दरख़्त को फैलाया बढ़ाया और फल फूल दार किया। यक़ीनन इसी दीन के आख़िरी नबी व रसूल सैय्यिदुल अम्बिया ख़ातमुन्नबिय्यीन मख़लूक़ात में सबसे अफ़ज़ल जनाब मुहम्मद मुस्तफ़ा[स०] थे। जिनके पहले वसी और ख़लीफ़ा हज़रत अली[अ०], दूसरे इमाम हसन[अ०] तीसरे वह हुसैन[अ०] इब्ने अली[अ०]। जिनकी तरफ़ कर्बला मन्सूब है और इसके बाद इमाम हुसैन[अ०] की औलाद से तो मासूम और इमाम हुए इन सबने इस्लाम ही को फैलाया, बढ़ाया और इस्लाम के तालीमात पर दुनिया के इन्सानों को चलाया। मेरा अक़ीदा है कि सब के सब इस्लाम के मुबल्लिग़ थे, मुहाफ़िज थे, जो अन्दाज़ जिस नबी और वसी के ज़माने के हिसाब से था मुनासिब था इस अन्दाज़ से तबलीग़ और इस्लाम की हिफ़ाज़त में कोई कमी नहीं की और दौरे मासूमीन और आख़री मासूम[अ०] की ग़ैबत के बाद बहुत से उलमा भी ऐसे गुज़रे जो रसूल[स०] की हदीस "उलमाओ उम्मती कअम्बियाइ बनी इस्राईल" का सही मिस्दाक़ होते हुए इस्लाम की हिफ़ाज़त और उसके मिटते हुए नक़्श और निगार रौशन कर गये, और मुमकिन है कि आइन्दा भी और ऐसे उलमा पैदा हों, लेकिन मिस्टर मुहम्मद अली का यह कहना कि "इस्लाम ज़िन्दा होता है हर कर्बला के बाद" बिल्कुल ग़लत और या तो जानबूझकर कर्बला के वाक़िआत से आँख चुराने का सुबूत है। दुनिया याद रखे कि जिस तरह इस चौड़े आसमान के नीचे और पूरी दुनिया के ऊपर बल्कि तमाम आलम बल्कि दुनियाए हस्तो बूद में जिस तरह कोई ज़मीन फ़ुरात के कनारे पैदा की जाने वाली ज़मीन नेनवा के अलावा कर्बला न बनी और न है। न क़यामत तक होगी, इसी तरह शहीदे नैनवा से पहले या बाद उस वक़्त तक हशर और नश्र तक कोई हुसैन[अ०] पैदा हुआ था, न है, और न होगा। इसी तरह इमाम हुसैन[अ०] की शहादत जिस तरीक़े और अन्दाज़ से सामने आई वह न पहले हज़रते आदम[अ०] से लेकर अब तक और न अब से क़यामत तक हो सकती है, न होगी।

एक लाख चौबीस हज़ार नबी और उनके वसी इस

दुनिया में आए कुछ ने मुसीबत से और ज़्यादातर ने बहुत ही तकलीफ़ें और मुसीबतें उठाकर इन्तिक़ाल किया या शहादत पाई। आज उनमें से अक्सर लोगों के वाक़िआत और सवानेह हयात हमारे सामने हैं। मगर जब हम इन हालात को अपने सरदार व आक़ा इमाम हुसैन[अ॰] की ज़िन्दगी के वाक़िआत व शहादत के वाक़िए से ज़्यादा साबित नहीं होते। हक़ छुपाने वाले, हक़ीक़त को न जानने वाली दुनिया समझ ले और ख़ूब अच्छी तरह समझ ले कि जब किसी नबी[अ॰] रसूल[स॰], इमाम[अ॰] की शहादत अपने उनका रंग नक़्शो निगार और बेनज़ीर अन्दाज़े सदाक़त में डूबे हुए वाक़िआत कर्बला के सामने आने से मुँह छिपाती है तो कोई ग़ैर मासूम क्या हक़ीक़त रखता है कि वह कर्बला के जैसे नक़्श और निगार शहादत पेश करने की हिम्मत करे या नाम भी ले सके। जनाब आदम[अ॰] की औलाद में हाबील[अ॰] शहीद जनाब ज़करिया[अ॰] जनाब जरजीस[अ॰] और आख़िर में जनाब यहया[अ॰] और फिर ईसाईयों के अक़ीदे के मुताबिक़ जनाब ईसा[अ॰] वग़ैरा-वग़ैरा शहीद हुए मगर कर्बला की शहीदे आज़म के मुक़ाबले में इन हज़रात की शहादत का पल्ला सुबुक होकर इतना ही बुलन्द हो जाता है। जितना हज़रत ईसा के ठहरने की जगह बल्कि मेरा तो अक़ीदा है कि हमारे अइम्माए मासूमीन से हर मासूम या ज़हर से शहीद हुआ या तलवार से और ख़ुदा की क़सम मैं उनमें से हर एक की शहादत को तमाम नबियों से बुलन्द जानता हूँ और मेरा यह भी अक़ीदा है कि अली[अ॰] और उनकी तमाम औलाद मासूम में से क़ुदरत जिस एक से भी वाक़िआत कर्बला की ख़िदमत लेना चाहती वह ठीक उसी तरह इस शहादत के रास्ते से सब्र व इस्तेक़लाल के साथ गुज़र जाता, जिस तरह हमारे सैय्यिद व आक़ा हुसैन[अ॰] इब्ने अली[अ॰] गुज़रे मगर इसको क्या किया जाये कि ज़माने के हालात और ख़ुदा की मस्लेहत ने जिस तरह हमारे रसूल[स॰] को ख़त्मे नुबूव्वत के लिये और अली को ख़िलाफ़ते बिला फ़स्ल के वास्ते ख़ास कर दिया इसी तरह मुनासिब ज़माने और हालात और क़ुदरत की निगाहे इन्तेख़ाब ने हुसैन[अ॰] इब्ने अली[अ॰] को कर्बला के ज़ब्हे अज़ीम के लिये चुन लिया और ख़ास कर दिया। 61[हि॰] के बाद से इस वक़्त तक न यज़ीद पैदा हुआ न वैसे हालात सामने आये, न इस तरह इस्लाम मिटाने की कोशिश की गई, न क़ुदरत की मस्लेहतें ऐसी शहादत के अन्दाज में पेश आईं और न आइन्दा होंगे इसलिए न कोई हुसैन[अ॰] के जैसा हो सकेगा और न कर्बला दूसरी पैदा होगी।

मिस्टर मुहम्मद अली बड़े बाख़बर बाहोश, और समझदार इन्सान, सियासत के बड़े माहिर मान लिये गये, मगर यक़ीनन मोमिनों और उनकी मिसाल बल्कि मैं तो इस हद तक बढ़ जाने की जसारत करूँगा कि शियों के अलावा शायद हज़ारों हज़ार मुसलमानों में एक दो के अलावा किसी मुसलमान ने भी तफ़सीली तौर से और गहरी नज़र से हुसैन[अ॰] की शहादत पर नज़र नहीं डाली, इस वजह से वह समझ भी नहीं सकते कि इस अज़ीमुश्शान क़ुर्बानी की अहमियत, बुलन्दी और समरात व असरात और फ़ायदे क्या थे इस छोटी सोंच का नतीजा है कि वह सैकड़ों हुसैन[अ॰] और हज़ारों करबलाएं बना देने पर तैयार हैं बल्कि ग़ुलाम अहमद क़ादयानी ने तो यहाँ तक कह दिया कि *''सद हुसैन अस्त दर गिरेबानम ख़ुदा''* ख़ुदा की पनाह सौ हुसैन कैसे एक छोटे से ग़ुलामे हुसैन[अ॰] के गिरेबान में समा सकते हैं। कैसे दिल और दिमाग़ भी उनके इस क़ौल से इत्तेफ़ाक़ कर सकता है दुनिया इन्साफ़ करे कि समझे बूझे शहादत की तरफ़ क़दम बढ़ाना क्या इसके मिस्ल हो सकता है जो बिना इरादे शहादत पाये या बग़ैर इस जानकारी के कि मैं क़त्ल किया जाऊँगा। शहीद हो जायेगा, बचाव की राहें मौजूद होने के बाद शहादत क़ुबूल कर लेना इसके बराबर क्योंकर हो सकता जो अब किसी सूरत से बच ही न सकता हो और क़त्ल हो जाने पर मजबूर कर दिया जाए, जो सिर्फ़ एक चौ हरफ़ी लफ़्ज़ (बैअत) लेने के वास्ते हाथ बढ़ाकर क़त्ल व ग़ारत से बचना ही नहीं बल्कि अल्लाह की पनाह यज़ीद के पहलू बपहलू बैठ कर बड़े ऐश व आराम से ज़िन्दगी बसर कर सकता हो। हरगिज़ किसी ऐसे शहीद के मिस्ल नहीं क़रार दिया जा सकता जिसके लिये चारा और तदबीर की हक़ या बातिल का रास्ता कुशादा न हो सिर्फ़ क़त्ल ही क़त्ल उसके सामने हो। सैर और सैराब होकर क़त्ल होने वाला

(बक़िया पेज.............10 पर)

सैय्यिदुल उलमा के ख़ुतबे (6)

हज़रत इमाम हुसैन अ० ने मशवेरा देने वालों का कहना क्यों नहीं माना?

अगर वाक़िअ-ए-कर्बला न होता तो क्या होता?

सैय्यिदुल उलमा ताबा सराह की यह तक़रीर 10 अप्रैल 1955ई० को सुबह साढ़े दस बजे से 11 बज कर 55 मिनट तक लाहौर के अज़ीमुश्शान इजलास "हुसैन डे" में हुई।

1361हि० के बैनुलअक़्वामी इज्तेमाआत के बाद जो हर-हर शहर, हर-हर क़स्बे, हर-हर देहात में हुए थे और जिनमें से हर इज्तेमाअ में क़ौम और मज़हब के लोग शरीक हुए थे कम से कम मेरे लिये और मेरे साथियों के लिये जो देहली या लखनऊ से आए हैं या उस ज़माने में वहाँ के रहने वाले थे लाहौर का यह मुज़ाहेर-ए-हुसैनियत कोई हैरत वाली या ग़ैर मामूली बात नहीं। मगर याद रखिये कि जितनी बीमारी सख़्त होती है दवा का असर उतना ही ज़्यादा नज़र आता है वह 1361हि० था और आज 1374हि० है इस ज़माने के हालात में ज़मीन और आसमान का फ़र्क़ हो गया। इस बीच जो ज़लज़ले, आँधिया और सैलाब आए जिन्होंने ज़मीन और आसमान बदल दिया और इन हालात में यक़ीनन लाहौर का जलसा ख़ास अहमियत रखता है और एक तरह का नया तजुरबा है जो लोगों के सामने आया है।

1361हि० में दिलों के आब गीनों में बाल पड़े थे मगर उनके परख़्वे न उड़े थे और चोटें आयीं थीं मगर ज़ख़्म नहीं थे। हमारे ख़यालों की सिम्तें (दिशाएं) अलग-अलग हुई थीं लेकिन जिस्म जुदा-जुदा न हुए थे मगर 1374हि० में जबकि लाहौर में आज ये अज़ीमुश्शान इज्तेमाअ हुआ है वह वक़्त है कि जब हालात ने ऐसा अज़ीम तफ़रक़ा डाल दिया कि मुल्क का क्या ज़िक्र घराने और घर बंट गये। बहुत से भाई से भाई, बाप से बेटा, शौहर से बीवी, बहन से भाई की जुदाई हो गई। इस दौर में हुसैनियत का यह अजीब तजरबा है जो इन्सानियत के सामने पेश हो रहा है और यह साबित कर रहा है कि बड़े-बड़े इन्क़ेलाबों के बाद जब हुसैनियत का परचम खुल जाता है तो मज़हबों का फ़र्क़ और क़ौमों और मुल्कों का इम्तियाज़ मिट जाता है और हिन्दुस्तान और पाकिस्तान हो जाते हैं।

1361हि० से ज़्यादा आज का यह तजरबा काम आने वाला और फ़ायदेमन्द है इसलिए कि उस वक़्त हम एक ऐसे निज़ाम के तहत गिरफ़्तार थे कि दुनिया में हमारी आवाज़ असर नहीं रखती थी और दुनिया के बैनुलअक़्वामी मजालिस में अवाज़ बलन्द करने से हम घबराते बल्कि शरमाते थे मगर अब जबकि हम आज़ाद हो चुके हैं तो हम यह हक़ रखते हैं कि बैनुलअक़्वामी हालात में अपने इस पैग़ाम को पहुँचा सकें।

आज हम अपने-अपने मुल्क में आज़ाद हो चुके हैं और हम में से हर एक अपने अपने ज़रियों का ख़ुद मालिक है। दुनिया की क़ौमों में कम से कम क़ानूनी तौर पर दूसरों के साथ आलमी मसाएल के हल के लिए हम बराबर से बैठते हैं बल्कि कुछ जगह हम तीसरा फ़रीक़ बन कर मसलों को हल करते हैं और दुनिया हमारे सामने अपने मसलों को पेश करती है तो यह जल्सा एक तजुरबे की जगह है। इसकी कामयाबी के बाद मैं उस मुस्तक़बिल को देखता हूँ जबकि पाकिस्तान और हिन्दुस्तान दोनों के बड़े आलिम हुसैनियत के साये में आलमी मसाएल को तय करें और शायद आगे चल कर वह हालात पैदा हों कि "हुसैन डे" का यह जल्सा दुनिया के किसी और बड़े मरकज़ में किया जाये चाहे अमरीका में हो चाहे यूरोप में चाहे रूस वग़ैरा में और फिर उस हुसैनियत के मरकज़ से बैनुलअक़्वामी दुख दर्द का इलाज

किया जाये।

याद रखिये कि आज कोई ताजदार, मुल्कों का फ़ातेह ऐसा नहीं सोचा जा सकता जिसका नाम क़ौमों और मिल्लतों को गले मिला दे चाहे वह कितने ही जाह और जलाल का मालिक हो मगर कर्बला के तड़पते हुए लाशे, बहता हुआ ख़ून और नेज़ों पर बलन्द होने वाले सर आज दुनिया को एक मरकज़ पर ले आ सकते हैं समझे आप अहलेबैत^{अ०} का निज़ाम।

दुनिया ने मुल्कों की जीतों को कामयाबी की दलील समझा लेकिन अहलेबैत[अ०] ने दिलों के जीतने को अस्ल जीत की दलील समझा। मुल्कों के जीतने वाले ख़त्म हो गये लेकिन दिलों के जीतने वाले उसी तरह ज़िन्दा हैं।

याद रखिये यह जीत का राज़ वह था जिसे हुसैन[अ०] को मश्वरा देने वाले नहीं समझे थे लेकिन हज़रत इमाम हुसैन[अ०] इस राज़ को जानते थे। मश्वरा देने वालों ने हज़रत इमाम हुसैन[अ०] को राय दी कि आप कर्बला न जाइये मगर इमाम ने मश्वरा देने वालों का कहना ना माना तो क्या यह बुरा किया? पैग़म्बरे इस्लाम[स०] ने अपने मश्वरा देने वालों का कहना कब माना। किसी और का क्या कहना सगे चचा का कहना न माना।

यह मश्वरा देने वाले माद्दी मुस्तक़बिल समाने रखते थे और आज के मश्वरा देने वालों का हवाला देने वाले भी वही दिमाग़ रखते हैं बेशक वह छोटी नज़र से देखने में मर गये, मिट गये बर्बाद हो गये। गोद के बच्चे तक शहीद हो गये औरतें क़ैद हो गयीं यह सब मश्वरा देने वालों का कहना न मान कर हुआ मगर पैग़म्बरे इस्लाम[स०] ने भी तो मश्वरा देने वालों का कहना ना मान कर दुख ही उठाये।

यह न देखिये कि 13 साल के बाद हिजरत हुई और अन्सार मिले लेकिन हिजरत से पहले 13 साल अल्लाह के रसूल[स०] ने क्या किया? दुख नहीं सहे, जिस्म पर पत्थर नहीं खाये, मुबारक सर पर कूड़ा-करकट नहीं फेंका गया? यह सब कुछ हुआ। शेबे अबी तालिब में 3 साल क़ैद रहे यह ज़माना इतना सख़्तियों से भरा हुआ था कि कई-कई वक़्त न खाना मिलता न पानी। अक्सर दरख़्तों के पत्ते खा-खा कर गुज़र की जाती थी। इन्हीं तकलीफ़ों का असर था कि मुहासरे से बाहर आने के बाद कुछ ही महीने हज़रत ख़दीजा और अबूतालिब दोनों की वफ़ात हो गई जिनकी बुनियाद पर अल्लाह के रसूल[स०] ने इस साल का नाम आमुल हुज़्न रख दिया यह सब कुछ कहना न मानने ही का नतीजा तो हुआ।

अब दुनिया बताये कि उन्होंने अच्छा किया या बुरा किया और इसका क्या नतीजा हासिल हुआ। फिर अगर पैग़म्बरे इस्लाम[स०] का मश्वरा देने वालों के मश्वरे को ठुकरा देना ठीक था तो हज़रत इमाम हुसैन[अ०] ने भी अगर मश्वरा देने वालों का कहना न माना तो क्या बुरा किया?

तारीख़ की किताबों में मश्वरा देने वालों का बहुत बयान है मगर किसी कमज़ोर रिवायत में भी यह बात न मिलेगी कि किसी मुशीर ने यह राय दी हो कि आप यज़ीद की बैअत कर लीजिये। मश्वरे इस तरह के थे कि इराक़ न जाइये, ताएफ़ तश्रीफ़ ले जाइये, यमन चले जाइये, मक्क-ए-मुअज़्ज़मा में ठहर जाइये लेकिन किसी ने कभी यह नहीं कहा कि आप यज़ीद की बैअत कर लीजिये।

इसके ये माने हुए कि यज़ीद की बैअत करना इमाम हुसैन[अ०] के लिये सब ही के नज़दीक नामुमकिन या न समझ में आने वाली बात थी। अब बैअत न करने के बाद जिन जगहों के बारे में मश्वरा दिया जा रहा था उनमें से कोई भी क्या ऐसी थी जो यज़ीद की हुकूमत से बाहर हो। इसलिए नतीजा यही था कि यज़ीद की तरफ़ से फ़ौजी चढ़ाई हो। पण्डित व्यास देव मिश्रा का वह जुम्ला कितना पसन्दीदा है जो आप ने अपनी तक़रीर के बीच में कहा कि अब सवाल सिर्फ़ मक़तल के चुनने का था। इमाम हुसैन[अ०] की शहादत तो यक़ीनी थी ही अगर मदीने में रहते तो इस तरह होता जैसे हज़रत इमाम हसन[अ०] के साथ हुआ। उसी तरह मक्का में होते तो भी किसी ख़ुफ़िया तरीक़े से ख़ात्मा कर दिया जाता।

इमाम हुसैन[अ०] का मक्का छोड़ना किन हालात में था उसको यूँ समझिये कि जो फ़ितरत के ख़िलाफ़ अमल हुआ उसे ज़रूर ग़ैर मामूली वजहों का नतीजा मानना पड़ेगा। वह हुसैन[अ०] जो 25 हज पैदल हर चुके हों और हज की इतनी चाहत रखते हों कि मदीने से आ-आ कर हज करते हों इस तरह सवारी के साथ खाली जा रहे हों और अपने पैरों पर जा रहे हों क्या इतना इबादत का शौक़ रखने वाले हुसैन[अ०] को मक्के से आज वह ताल्लुक़ न था जो मुसलमानों को ख़ान-ए-काबा से होता है उनका ताल्लुक़ काबे के साथ मज़हबी ताल्लुक़ के अलावा ख़ानदानी ताल्लुक़ था वह उनके बाप की पैदाइश का मक़ाम भी था। फिर ख़याल तो कीजिये कि पैग़म्बरे

इस्लाम[स०] का नवासा और एक दिन हज का बाक़ी रहते हुए वहाँ से सफ़र कर रहा है जबकि तमाम मुसलमान मक्का की तरफ़ हज करने जा रहे हैं वह वहाँ मक्का छोड़कर निकल रहे हैं और रास्ते में क़ाफ़ले वाले हैरत से पूछते हैं कि इमाम इस वक़्त किधर जा रहे हैं। और हर शख़्स का सवाल फ़रज़न्दे रसूल[स०] के दिल पर तीर का काम कर रहा है। हर एक से कहाँ असली बात बताते। किसी-किसी से कह भी दिया कि अगर मैं निकल न खड़ा होता तो क़त्ल हो जाता या गिरफ़्तार हो जाता इसलिये कि हाजियों के भेस में सिपाही भेजे गये थे कि जब और जहाँ इमाम मिलें उन्हें शहीद कर दिया जाये।

इन ज़ालिमों के लिये जब वह हुरमत वाले न थे तो हुरमत वाला शहर उनके लिये हराम कहाँ हो सकता था जब उनको वक़्त की हुरमत का ख़याल न था तो जगह का एहतेराम कहाँ करते।

आज दुनियावी सियासत की नज़र ने इस मामले को देखिये कि अगर कहीं मक्का में तवाफ़ या सई की हालत में या नमाज़ में कोई शख़्स आकर शहीद कर देता तो फ़रज़न्दे रसूल[स०] शहीद हो जाते लेकिन आज तक दुनिया को यह न मालूम हो सकता कि क़ातिल कौन है।

इतिहास के पन्नों पर आज यह मामला साफ़ है कि हज़रत इमाम हुसैन[अ०] बिल्कुल बेजुर्म थे और उनका क़ातिल यज़ीद था लेकिन अगर रसूल[स०] के फ़रज़न्द इस सूरत में शहीद हो जाते तो इमाम का क़ातिल छुप कर ज़िन्दा रहता मगर इमाम हक़ीक़ी मानों में क़त्ल हो जाते और आपका मक़सद भी आप के साथ ही क़त्ल हो जाता।

क्या इमाम को मश्वरा देने वाले इतनी समझ रखते थे जो इन नतीजों को सामने रख कर मश्वरा देते? उनमें कुछ अस्ली हमदर्द थे और कुछ नुमाइशी तौर पर भलाई कर रहे थे जो सियासत की मातहती में हमदर्द बन रहे थे मगर सबके मश्वरे सिर्फ़ वक़्ती हालात की बुनियाद पर जज़्बात से असर लेकर दिये गये थे। मगर इमाम हुसैन[अ०] जज़्बात से बलन्द थे क्योंकि जज़्बात से बलन्द हस्ती का नाम ही मासूम है। और उन्होंने मश्वरों की मुख़ालेफ़त करके अपना जज़्बात से बलन्द होना दिखा दिया और साबित कर दिया कि उन्होंने जज़्बात से किसी तरह असर नहीं लिया।

कहा जाता है कि कर्बला का वाक़िआ इतनी अहमियत क्यों रखता है या इसको अहमियत क्यों दी जाती है **अगर यह वाक़िआ न होता तो क्या होता?** मगर अब जबकि वाक़िअ-ए-कर्बला हो चुका मैं क्या बताऊँ कि न होता तो क्या होता। जिसने अन्धेरा देखा न हो और दिन ही को आँख खोली हो वह पूछे कि सूरज न होता तो क्या होता तो उसे किस तरह बताया जा सकता है।

इमाम ने जो क़ुर्बानी पेश की हमने उसकी बरकत के साये में आँख खोली है आप ने हक़्क़ानियत का ऐसा सूरज चमकाया जो कभी डूबने वाला नहीं इसलिए अब कोई क्या समझे कि वाक़िअ-ए-कर्बला न होता तो क्या होता। यह कहना ऐसा ही है जैसा कोई कहे कि ख़ुदा न होता तो क्या होता ज़ाहिर है कि ख़ुदा न होने से तजरबा ही किसी को नहीं हो सकता। क्यों ख़ुदा हमेशा से है मैं तो समझता हूँ कि वाक़िअ-ए-कर्बला न होता तो यह जो कुछ है कुछ भी न होता हमारी दीनी ज़िन्दगी जिसको दूसरे लफ़्ज़ों में मैं इन्सानी ज़िन्दगी कहूँगा। और शरीफ़ाना बाशऊर बा इज़्ज़त और ख़ुददार ज़िन्दगी इस सबका कुछ पता न होता, अज़ानें न होतीं, अक़ामत न होती, नमाज़ न होती, रोज़ा न होता, हज न होता, क़ुरआन न होता, अख़लाक़ न होता, एहसास न होता, तमद्दुन न होता, तहज़ीब न होती बराबरी और भाईचारगी न होती, आज़ादी न होती, शहादत का शौक़ न होता, हक़्क़ानियत न होती, और हक़ परस्ती न होती अब इसके बाद मैं क्या बताऊँ कि वाक़िअ-ए-कर्बला न होता तो क्या होता मगर अभी तक तो यह दावा ही दावा मालूम होता है इसके सुबूत के लिये मैं कहूँगा यह देखिये कि वाक़िअ-ए-कर्बला न हुआ था तो क्या हो रहा था और ख़ुदा की क़सम जो हो रहा था वह ऐसा है कि अब यक़ीन मुश्किल से आता है कि यह हो रहा था।

जिस पैग़म्बर[स०] ने यह नमूना पेश किया हो कि दीन और दुनिया की हुकूमत पैरों में रखते हुए कई-कई वक़्त पेट पर पत्थर बाँधा और खाना न खाया हो और जिस पैग़म्बर[स०] ने हमें यह नमूना दिखाया हो कि वह इज़्ज़तदार बेटी जिसकी ताज़ीम के लिए आप खड़े हो जाते हों, यानी फ़ातिमा ज़हरा[स०] अपनी जगह तो उनकी यह इज़्ज़त थी मगर जब उन्हें कनीज़ अता करते हैं तो कनीज़ के साथ बराबरी का इतना ख़याल फ़रमाते हैं कि बेटी! घर का सारा काम काज फ़िज़्ज़ा पर ना डालना बल्कि एक दिन घर का काम ख़ुद करना और एक दिन फ़िज़्ज़ा से लेना चुनानचे बेटी ने ऐसा ही करके दिखा दिया कि एक दिन

फ़िज़्ज़ा खाना पकातीं और काम काज करती और हज़रत फ़ातिमा[स०] आराम फ़रमातीं और दूसरे दिन हज़रत फ़ातिमा[स०] घर का काम करतीं और फ़िज़्ज़ा आराम करतीं। लोग कहते हैं कि ग़ुलामी को ख़त्म क्यों न कर दिया? अगर ऐसा होता तो ग़ुलामी का मेयार अपनी जगह ही रहता। आले रसूल[स०] ने बताया कि यह तो आपसी मदद के ज़रिये हैं। आक़ा ग़ुलाम शौहर बीवी वग़ैरा। यह रिश्ते घर के लोगों में गिने जाने का ज़रिया हैं। इनको ख़त्म करने की ज़रूरत नहीं। मगर ज़हनियत बदलने की ज़रूरत है आज जब छोटे भाई से यह सुलूक किया जाता है कि कहते हैं-

''सग बाश बरादरे ख़ुर्द मबाश''

तो हमारी इस तहज़ीब में ग़ुलाम बाँदी के साथ अच्छा सुलूक कहाँ होगा। मगर यह ग़लती हमारी तहज़ीब की है आले मुहम्मद[स०] के ग़ुलामों और बाँदियों से पूछो कि तुमको आज़ाद होना मन्ज़ूर है या ग़ुलाम रहना। आज की आज़ादी हज़ार ग़ुलामी से बदतर और वह ग़ुलामी रश्के ताजदारी थी वह फ़ातिमा ज़हरा[स०] का पैग़म्बर[स०] की हिदायत के मुताबिक़ सुलूक अपनी कनीज़ फ़िज़्ज़ा के साथ और इसी तरह हज़रत अली[अ०] का सुलूक अपने ग़ुलाम क़म्बर के साथ उस वक़्त नहीं जबकि आप ख़ाना नशीन थे बल्कि उस वक़्त जब कि आप शहंशाह माने जा रहे थे ऐसे वक़्त क़म्बर के साथ जो सुलूक आपने दिखाया कि बाज़ार से दो कपड़े ख़रीदे एक सात दिरहम का दूसरा पाँच दिरहम का। पहला कपड़ा अपने ग़ुलाम क़म्बर को हज़रत ने अता फ़रमाया और पाँच दिरहम वाला ख़ुद पहना। क़म्बर अर्ज़ करते हैं कि हुज़ूर! ये कुछ बेहतर है। इसे आप पहनिये। हम में से आज का कोई आदमी पहले तो ऐसा करता ही क्यों। अगर कोई लीडर ऐसा कर भी देता तो जब कंबर ने अर्ज़ किया था कि हुज़ूर ये बेहतर है आप पहन लें तो फ़ौरन अपनी मुस्लेहाना हैसियत का अलम ऊँचा कर देता वह जवाब में एक तक़रीर कर देता कि क़म्बर में दुनिया से इस फ़र्क़ को ख़त्म करना चाहता हूँ मैं दुनिया के ग़ुलामों का मेयार बलन्द करना चाहता हूँ वग़ैरा-वग़ैरा।

लेकिन हज़रत अली[अ०] ने ये जवाब नहीं दिया हालांकि सामने यही था लेकिन क़म्बर से अगर ये फ़रमाते तो इस जवाब में नाबराबरी छुपी थी इस इरशाद से क़म्बर को ग़ुलामी का एहसास हो जाता आप क़म्बर को ऐसा जवाब देते हैं जैसा अपने बच्चों को दिया जाता है कि तुम जवान हो तुम पर ये कपड़ा अच्छा लगता है।

पैग़म्बरे इस्लाम ख़ुद जिस तरह की तरबियत मुसलमानों की करना चाहते थे वह इस वाक़िए से भी ज़ाहिर है कि हज़रत के पास सफ़ में एक रईस ख़ाली जगह पाकर बैठ जाते हैं कि इतने में एक ग़रीब पुराने कपड़ों वाला जो आदाबे नबवी का आदी है आकर उस रईस के पास बैठ जाता है रईस साहब ने अपने मेयारे तबीयत के लेहाज़ से बहुत अख़्लाक़ से काम लिया बहुत सब्र से काम लिया अपना दरबार होता तो शायद ये उसको डांट डपट कर निकाल देते और बदतमीज़ कह देते।

मगर वह पैग़म्बर का दरबार था यहाँ यह मुमकिन न था फ़िर भी फ़ितरी तौर पर सोंच का मुज़ाहेरा इस तरह हो गया कि रईस ने अपने कपड़े समेट लिये। पैग़म्बरे इस्लाम[स०] ने इतना भी पसन्द न किया और ख़लक़े अज़ीम की तेवरियों पर बल आ गये और फ़रमाया यह तुम ने क्या किया? क्या इस की ग़रीबी तुम में आ जाती या तुम्हारी रियासत इसको मिल जाती या चली जाती दामन क्यों समेटा?

मुरब्बिये आज़म की इस तम्बीह का इतना असर हुआ कि वक़्ती तौर पर उसका ज़मीर शर्मिन्दा हुआ। और अर्ज़ की ऐ अल्लाह के रसूल! इस गुनाह के कफ़्फ़ारे में मैं अपनी आधी दौलत इस ग़रीब भाई को देता हूँ। मुस्कुराते हुए हुज़ूर[स०] ग़रीब की तरफ़ मुतवज्जेह हुए कि यह आधी दौलत की पेशकश तुमको मन्ज़ूर है? ग़रीब सहाबी ने जवाब में अर्ज़ किया कि इसे शुक्रिये के साथ वापस करता हूँ। हुज़ूर[स०] ने फ़रमाया कि यह ख़ुशी से दे रहा है। उसने अर्ज़ किया मुझे डर है कि यह ज़हनियत कहीं मुझ में न पैदा हो जाए।

अख़लाक़ की किताबों में सिर्फ़ नुमाइश के तौर पर लिख देना आसान बात है लेकिन जीती जागती अमल की दुनिया में इतने कम वक़्त में उसको सामने लाना बड़ी मुश्किल बात है। पैग़म्बरे ख़ुदा[स०] ने हर तालीम को अमल की सूरत में दुनिया के सामने ज़िन्दा मिसाल की शक्ल में पेश कर दिया कि मेरा निज़ाम सिर्फ़ ज़हनी या दिमाग़ी नहीं बल्कि अमली है वह ज़िन्दा निज़ाम है जो सीरत और किरदार की शक्ल में आँखों के सामने आता है। मेरा क़ानून लफ़्ज़ी नहीं बल्कि बिल्कुल अमली है।

यही वजह है कि अल्लाह किताब के साथ अहलेबैत

की ज़रूरत हुई और इरशाद हुआ:- *'मैं तुम्हारे बीच दो गराँक़द्र चीज़ें छोड़कर जा रहा हूँ अल्लाह की किताब और मेरे अहलेबैत'* और इसी लिये अहलेबैत[अ०] को मुबाहले के मैदान में अपने साथ ले गये थे मेरा अक़ीदा है और मेरे नज़दीक हर मुसलमान का यही अक़ीदा होना चाहिए कि रसूल[स०] की दुआ किसी की आमीन की मुहताज न थी बल्कि उनमें से हर एक की दुआ अकेले काफ़ी थी, मगर ख़ालिक़े अकबर ने नबी[अ०] को हिदायत फ़रमाई की इन सबको साथ ले जाओ मंज़िले मुबाहला में।

इसलिए कि जब सच्चे और झूटे लोगों में मुक़ाबला हो रहा है तो दुनिया जान ले कि ख़ालिस सच्चे लोग ये हैं और जब रिसालतमॉब दुनिया से उठ जायें तो जो काम आपके बाद इनसे लिया जाना है वह ज़िन्दगी ही में उनसे ले लिया जाये। इसलिए इस्लाम की मदद के लिए आज उनको साथ लिया और शरीके कार बनाया। मुबाहले के इस शरीके कार होने में सबसे कमसिन हुसैन[अ०] थे और रसूल[स०] खुद अपनी गोद में ले गए थे। अल्लाह के रसूल[स०] की निगाह माज़ी के आइने में मुस्तक़बिल का नक़्शा देख रही थी कि उसी हुसैन[अ०] की क़ुर्बानी की दुनिया को ज़रूरत पेश आयेगी। चुनानचे 61[हि०] में वह पेश आ गई ये अहलेबैत[अ०] दुनिया में इसी लिये छोड़े गये थे और इनकी पहचान मुसलमानों से इसीलिए कराई गई थी कि यह इस्लामी तहज़ीब की ज़िन्दा तस्वीर थे क्या हैरत की बात नहीं है कि जिन मुसलमानों की तरबियत इस मेयार पर की जा रही हो। उन मुसलमानों में सिर्फ़ पचास साल बाद ही यह वक़्त आ गया कि इस्लामी राजधानी में रेशमी पर्दे लटक रहे हों और ग़ुलाम ज़र्ररीन कमरबन्द लगाये हुए बादशाह के सामने खड़े हों और दरवाज़ों के ऊपर पहरे लगे हों ताकि किसी ग़रीब की पहुँच न हो सके और किसी मज़लूम की फ़रियाद उसके कानों में पहुँचना नामुमकिन हो जाए यही नहीं बल्कि बादशाह के सामने सोने चाँदी के बर्तनों में पानी पिलाया जा रहा हो।

यह सब बातें यज़ीद से पहले हो चुकी थीं और अगर कोई सहाबी जैसे एबादा बिन सामित वग़ैरा टोकते भी थे तो उनको क़दामत पसन्द होने की सनद मिलती थी याद रखिये यही हालात तरक़्क़ी करके यज़ीद के किरदार के दर्जे तक पहुँची यज़ीद से पहले सोने चाँदी के बर्तनों में पानी पिया गया जो बर्तन के एतेबार से इस्लामी शरीअत में हराम है तो यज़ीद के यहाँ शीशों के जामों में शराब पी जाने लगी और शराब के दौर चलने लगे अब बजाए तकबीर की आवाज़ों के नाच गाने और शराब की आवाज़ें बलन्द हो रही थीं रंग बिरंग की महफ़िलों में नमाज़ का वक़्त आकर गुज़र जाता लेकिन महफ़िल की रौनक़ में कुछ फ़र्क़ न आता।

ग़ज़ब यह है कि यह सब कुछ रसूल[स०] की जानशीनी के नाम पर हो रहा हो और सब मुसलमान दरबारी वग़ैरा मान रहे हों और यह होना इतना हैरत वाला नहीं जितना आम तौर पर मुसलमानों का मानना यानी यह सब कुछ हो रहा हो और मुसलमान इस हाकिम को रसूल का ख़लीफ़ा मान रहे हों। आज का मुसलमान ज़रूर हैरत से यह पूछेगा कि क्या मुसलमान उसको मान रहे थे?

जी हाँ सब मान रहे थे अगर सब न मान रहे होते तो तारीख़ गिनकर क्यों बताती है कि फ़लां-फ़लां ने नहीं माना। तारीख़ का गिनना बता रहा है कि और सब मान रहे थे। रसूल[स०] की वफ़ात के 50 साल बाद ही मज़हबी एहसास का यह हाल हो चुका था। और 61[हि०] से अब तक तेरह सौ तेरह साल हो चुके हैं मगर जबकि आम तौर पर एहसास किया जा सकता है कि इस्लाम घटता चला जा रहा है और तहज़ीब व तमद्दुन की हदें बर्बाद हो रही हैं मगर 60[हि०] के मुक़ाबले में इस वक़्त भी हालत बेहतर है और यह मजमा कम नहीं मैं इसी मजमे से शहर और देहात से आए हुए तमाम लोगों से पूछता हूँ कि क्या इनमें से कोई एक भी यज़ीद ऐसे शख़्स को रसूल[स०] का जानशीन मान सकता है?

आज के जाहिल से जाहिल और फ़ासिक़ व फ़ाजिर मुसलमान से भी पूछा जाये तो यज़ीद ऐसे आदमी को रसूल[स०] का जानशीन न मानेगा। लेकिन अल्लाह के रसूल[स०] की वफ़ात के 50 साल बाद लोग मान रहे थे। क्या इसके बाद भी किसी सुबूत की ज़रूरत है कि वाक़िअ-ए-कर्बला न होता तो क्या होता?

(चारों तरफ़ से नारों की अवाज़ बुलन्द हुई)

ज़ुल्म फ़िस्क़ फ़ुजूर से यह नफ़रत क्योंकर पैदा हुई। यह वाक़िअ-ए-कर्बला का फ़ैज़ है आज का यह जलसा और इस तरह की तमाम यादगारें इस असर को ज़िन्दा रखने के लिए हैं। इसी लिये अज़ादारी होती है और इसी लिये नामे हुसैन[अ०] की यह तकरार की जाती है।

अब भी सवाल होगा कि हुसैन[अ०] ने मश्वरा देने

वालों का कहना क्यों न माना और यह कि आप यज़ीद की बैअत कर लेते तो क्या हरज था। मैं कहूँगा कि वह हुसैन[अ०] न होते जो मान लेते कोई और होता। हुसैन[अ०] तो कभी शर्मिन्दा नहीं हुए कि मुशीरों का कहना क्यों न माना हुसैन[अ०] के साथ वाला भी कोई शर्मिन्दा न हुआ। कोई बच्चा हुसैन[अ०] के साथ का शर्मिन्दा न हुआ। और उधर कोई और क्या खुद यज़ीद मलऊन शर्मिन्दा हुआ मगर याद रखिये इस फ़र्क़ को कि वह ज़िन्दगी की शरमिन्दगी ज़मीर का नतीजा न थी जिसे तौबा समझा जा सके बल्कि वह एहसासे शिकस्त का नतीजा थी अब इस ख़याल से कि मेरे बाद वाले बोलने वालों पर ज़ुल्म होगा और मुझे खुद जल्से के मफ़ाद का भी एहसास है इसलिए अपनी तक़रीर को इस दुआ पर ख़त्म करता हूँ कि ख़ुदा करे जिस तरह आज के जल्से में जिस्म एक हो रहे हैं उसी तरह हमारे दिल और दिमाग़ भी एक जो जाएं और हुसैनियत का झण्डा ख़ुदा करे बराबर लहराता रहे और पूरब से पच्छिम तक को अपने साये में ले ले।



बक़िया.............इस्लाम और कर्बला

उनसे बहुत ही पस्त है जो तीन दिन की भूख और प्यास में क़त्ल किया गया हो। अकेले मुसीबतें बर्दाश्त करने वाला उसके मुक़ाबले में कहाँ आ सकता है जिनसे पहले अपने दोस्त फिर रिश्तेदार फिर बहन भाई की औलादें फिर अपने भाई और फ़ौरन उसके बाद अपने नौजवान बेटे और आख़िर में अपने छः महीने के बच्चे को दीन व मज़हब की हिफ़ाज़त पर क़ुर्बान कर देने के बाद ऐसे ज़ुल्म व सितम और तीर, नेजा, तलवार, गुर्ज़, पत्थर और आग से ज़ख़्मी होकर शहादत की मन्ज़िल हासिल की हो।

वह जिसे अपने माल के लुट जाने और अहलो अयाल के असीर होने, क़ैद होने का कोई डर न हो हरगिज़ उसके बराबर नहीं हो सकता। जो यक़ीन रखता हो कि मेरे बाद मेरा तमाम माल व अस्बाब लुट जायेगा। मेरे अहले हरम बेपर्दा किये जायेंगे। क़ैद होंगे क़ैद होकर दर-दर फिराये जाएंगे। इन्सान अपनी ज़ात के वास्ते हर चीज़ बर्दाश्त कर लेता है और बर्दाश्त कर सकता है। लेकिन जहाँ से औलाद का सवाल आ जाए वहाँ क़दम जमाए रखना लाख दो लाख ही से शायद एक ही निकल सके। और अगर इसके साथ घर वाले उसरत व इफ़्फ़त अहले हरम की असीरी और क़ैद व बन्द का सवाल पैदा हो तो कोई ग़ैरतदार शायद बिना मजबूरी के इसे बर्दाश्त नहीं कर सकता।

आज तो ग़ैर नहीं खुद मुसलमान ही बेपर्दगी के शैदा हैं। और उनकी बीवियाँ, बहुवें, बेटियाँ, मुँह खोले बाज़ारों में घूम रही हैं और किसी बाहया के कान पर जूँ नहीं रेंगती मगर ग़ैरतदार मुसलमान बल्कि मोमिन। बल्कि इमाम व मासूम जिसके घर वालों को खुले सरचश्मे फ़लक ने भी न देखे हों। उसके घर वालों को बेपर्दा होना वह सख़्त मुसीबत है जो बर्दाश्त के बाहर है। फिर इन तमाम चीज़ों के बाद ग़रज़ की पस्ती व बुलन्दी, खुद ग़रज़ी और ख़ुलूसे नियत का फ़र्क़ भी हर शहीद को बराबर नहीं क़रार दे सकता, जो दुनिया के लिये क़त्ल हो जाये इसकी शहादत कोई शहादत नहीं और जिसमें खुद ग़रज़ी, नफ़्स परस्ती की झलक है, वह इसके मिस्ल हरगिज़ नहीं हो सकता जो सिर्फ़ ख़ुदा की इताअत और दीन व मज़हब के लिये हर मुसीबत और हर सख़्ती बर्दाश्त करके शहादत की मन्ज़िल से सब्र व इस्तेक़लाल के साथ गुज़र जाए। तारीख़ की मुकम्मल तलाश और जुस्तजू के बाद आज तक एक भी ऐसा शहीद पेश न कर सकी जिसमें एक साथ एक ही वक़्त में वह तमाम शर्ते मौजूद हों जो ऊपर ज़िक्र की गईं।

और जो सब के सब बल्कि ऐसे भी बहुत ज़्यादा मुकम्मल सैय्यिदुश्शोहदा, इमामे मज़लूम व मासूम रसूले अरबी के नवासे हुसैन[अ०] इब्ने अली[अ०] भी मौजूद थे। और न आगे क़यामत तक हो सकते हैं बल्कि यूँ कहना चाहिए किः- इस लिये यह कहना बिल्कुल ग़लत है कि-

इस्लाम ज़िन्दा होता है हर कर्बला के बाद -

इब्तिदा-ए-ख़िलक़ते आलम से ता रोज़े क़याम
कर्बला बस एक थी और एक ही रह जायेगी
जब कोई मुरसल न होगा न अली[अ०] न फ़ातिमा[स०]
मिस्ले शाहे कर्बला[अ०] दुनिया कहाँ से लायेगी



अज़ादारी के दिनों में हमने क्या किया?

आयतुल्लाह सै० काज़िम नक़वी साहब क़िब्ला
अनुवादः बिन्ते ज़हरा नक़वी नदल हिन्दी साहेबा

यूँ तो इस नीले आसमान के नीचे हज़ारों बेगुनाहों के ख़ून बहे और बहते रहेंगे। दुनिया हज़ारों इन्क़ेलाबों की गवाह बनी और बनती रहेगी। ज़मीन लाखों इन्सानों के ख़ून से लाल हुई और होती रहेगी, मगर याद रखिये किसी ख़ून का रंग हमेशा बाक़ी न रह सका। यक़ीनन इन्क़ेलाबों ने आकर दुनिया में हलचल मचाई मगर कुछ ज़माने के बाद सुकून हो गया। इस काएनात में हज़ारों इन्सानों के मातम की सफ़ें बिछीं मगर फिर उठ गयीं किसी हादसे का असर हमेशा बाक़ी रहने वाला न बन सका लेकिन न जाने कर्बला की दास्तान में, नैनवा के दर्दभरे क़िस्से में कौन सा दर्द भरा हुआ है जिसका असर हर दिल में और जिस का ख़याल आज भी हर दिमाग़ में है। आख़िर इसमें क्या राज़ है? हक़ीक़त यह है कि दुनिया में ख़ून ज़्यादा बहा है, आदमी ज़्यादा मारे गये हैं, माल और सामान ज़्यादा लूटा गया है मगर दिल के पाक और अज़ीज़ जज़्बात की क़ुर्बानी इतने ज़्यादा असर और नतीजे वाली कहीं नहीं सामने आई जैसी कर्बला की ज़मीन पर रसूल[स०] के नवासे ने पेश की। यही वजह है कि दुनिया के इन्सानों का ग़म मनाया गया मगर कुछ दिनों के लिए लेकिन हुसैने मज़लूम[अ०] का ग़म ज़माने और जगह की क़ैदों से आज़ाद है। अज़ल से ही उनके मातम की सफ़ बिछी, आज भी उनकी अज़ादारी क़ायम है और आइन्दा ज़माना भी रौशन नज़र आ रहा है मगर क्या इमाम हुसैन[अ०] का ग़म उन पर सिर्फ़ चार आँसू बहा लेना, हाय वावेला मचा लेना है? नहीं, नहीं, ऐसा नहीं। अज़ादारी का अस्ल मक़सद यह है कि जिस रास्ते में उन्होंने जान दी, जिस मक़सद के लिए उन्होंने घर-बार लुटा दिया और जिस रास्ते में उन्होंने ज़ाहिरी इ़ज़्ज़त और आबरु तक को अज़ीज़ न किया, उस रास्ते को हम समझें और चलते रहने की कोशिश करें, उनके मक़सद को जानें और अमल से उनके मक़सद की हिफ़ाज़त करने वाले हों अगर ऐसा है तो अज़ादारे हुसैन[अ०] हैं वरना सूरत से हैं अपनी सीरत से नहीं।

कर्बला की जंग को जीतने वाला हुसैन[अ०] दुनिया को इन्सानियत की सही क़द्र और क़ीमत बताने के लिए उठा था, उसका मक़सद इन्सानियत और उसकी शराफ़त और फ़ज़ीलत को हैवानियत और बहीमियत के शिकन्जों से आज़ाद कराना था। वह दुनिया के लिए हक़ और सच्चाई का पैग़ाम लाने वाले थे। उनकी ज़िन्दगी अज़ादी के साथ अल्लाह की बन्दगी का एक सांचा थी जिसमें हर अक़्लमन्द अपनी सीरत को ढाल सकता है, उनका किरदार इन्सानियत के लिए एक बलन्द मेयार था, जिसकी कसौटी पर कस कर इन्सान के तमाम काम कमाल की मेराज पर पहुँच सकते हैं। वह सच्चों की सच्चाई के दिल की हिम्मत, जोशे अमल और जुरअते अख़्लाक़ के लिये हिदायत के मीनार हैं इसे यूँ समझिये कि हुसैन[अ०] नाम है ज़मीर की आज़ादी का, हुसैन[अ०] नाम है बातिल हुकूमत से बग़ावत का। यह वह बलन्द ख़ूबियाँ हैं जो इमाम हुसैन[अ०] की ज़ात से जुड़ गईं और उनकी हस्ती इनसे जुड़ गई। वह, वह आज़ादी पसन्द थे जिनके

नाम की याद आज़ादी की आवाज़ के साथ है। वह, वह हक़ वाले थे जिन्होंने हक की अवाज़ से आवाज़ मिलाई और हक़ हमेशा उनका साथी बन गया। हुसैन[अ०] वह थे जिन्होंने यज़ीद के ज़माने में नहीं बल्कि शैतानी व इब्लीसी ज़माने में झुके हुए इस्लाम को सीधा करके अपने बाद आने वाले हक़ के दावेदारों के दिलों में जुरअत और हिम्मत पैदा कर दी कि वह फ़ासिक़ और फ़ाजिर, जब्बार और क़ह्हार बादशाहों के मुक़ाबले में जम कर और उनसे न डर कर ईमान और इस्लाम की ***"हल मिन नासिरिन यन्सुरना"*** की आवाज़ पर लब्बैक कह सकें। वरना याद रखिये कि अगर 61[हि०] में बातिल के मुक़ाबले में यह हक़ की आवाज़ धीमी हो जाती तो क़यामत तक के लिये हक़ बातिल के सामने, शराफ़ात, ज़लालत के सामने, इन्सानियत हैवानियत के सामने और कहने दीजिये कि उलूहियत शैतानियत के सामने देखने में झुक जाती। हक़ीक़त ये है कि इस लाचारी और लावारिसी के ज़माने में अगर हक़ और सदाक़त, शराफ़त और आज़ादी और इन्सानियत और उलूहियत ने किसी के दामन में पनाह ली है तो वह हुसैन[अ०] थे।

यह था वह हुसैन[अ०] जिसने अल्लाह के बाक़ी मक़सद में जान निसार करके फ़ना का लिबास उतारा और बक़ा की चादर ओढ़ी। अब भला मुमकिन था कि हुसैन[अ०] की याद दुनिया से मिट जाये? नहीं, हुसैन[अ०] के ज़िक्र से अल्लाह की याद ताज़ा है। यह थे वह हुसैन[अ०] जिनकी तरफ़ आज हम अपने को मन्सूब करते हैं और उनके जाँनिसार, फ़िदाकार और चाहने वाले होने का दावा करते हैं।

मगर याद रखिये, मुहब्बत की कसौटी इताअत पर है अगर मुहब्बत के साथ-साथ इताअत भी है तो जानिये कि मुहब्बत का हक़ अदा हुआ, वरना ज़बानी मुहब्बत करने वाले बहुत हैं। यह अज़ादारी का ज़माना हमारे लिये एक अमल करने का नमूना था। मुहब्बत का तक़ाज़ा है कि अगर एक तरफ़ हमारी आँखें ग़म में आँसुओं से भरी हैं तो दूसरी तरफ़ दिल में भी ग़म और अफ़सोस का माहौल होना चाहिए। अगर मातम में हमारे सीनों पर हाथ पड़ते तो इस ख़याल के साथ कि यह मातम की आवाज़ है अगर मौक़ा आया तो इन्हीं हाथों से तलवारों की झन्कार की सदा पैदा होगी।

हम अगर काला लिबास पहने थे तो इस यक़ीन के साथ होते कि तौ सही दुनिया को इस ग़म में काले लिबास वाला बना के रहें। यक़ीनन हमारे घरों में मातम की सफ़ बिछी लेकिन हक़ जब अदा होता कि उसके साथ दिल भी मातमी बने होते। ग़म में असर जब होता कि नौहे और रोने की अवाज़ें घर और दीवारों से न टकरातीं बल्कि दिल की गहराईयों में उतर जातीं। फिर हम इस क़ाबिल थे कि हुसैन[अ०] का पुरसा उनकी माँ फ़ातिमा ज़हरा[अ०] को देते।

अज़ा के दिन ख़त्म हुए। हुसैन[अ०] के मानने वालों! अब तुम ज़रा ख़ुद ही तन्हाई में बैठ कर सोचो कि तुमने कितना असर लिया? तुम्हारे दिलों में कितनी हिम्मत, कितना अमल का जोश पैदा हुआ? ख़ुदा करे ीरे-ीरे बात के साथ अमल भी सही हो और यह ज़बानी मुहब्बत के दावे अमल करने वाले बन जायें। क्या दिन होंगे वह जब हुसैन[अ०] के मानने वालों के दिल में वही जोश, वही तड़प, वही हौसला होगा जो 61[हि०] में आशूर के दिन कर्बला की ज़मीन पर उन बहत्तर हुसैनी जाँनिसारों के दिल में था।

■■■

हुसैन[अ०] मानवता के संरक्षक

तनवीर नक़्वी तनवीर नगरौरी, लखनऊ

इतिहास गवाह है कि दुनिया में ऐसा कोई धर्म, कोई झण्डा (अलम, परचम) नहीं हुआ जिसके नीचे सारी इन्सानियत एकजुट होकर आ जाती। मगर हमने देखा कि चौदह सौ बरस पहले एक ऐसा इन्सान दुनिया में पैदा हुआ जिसने करोड़ों साल पुरानी दुनिया का इतिहास बदल कर रख दिया उसने वो सब कुछ सहन करने का फ़ैसला कर लिया जो इसके पहले वाले लाख कोशिशों के बावजूद भी पूरी तरह नहीं कर सके थे इस इन्सान ने सारे अत्याचार सहन करना गवारा किया मगर ये सहन नहीं किया कि एक इन्सान से उसकी इन्सानियत छीन ली जाय। ये इन्सान कोई और नहीं ईश्वर के दूत (नबी[स०]) का छोटा नवासा हुसैन[अ०] था।

सन् 680[ई०] में हुसैन[अ०] के सामने एक ऐसा ज़ालिम, दहशतगर्द, इन्सानियत का दुश्मन, जानवर यज़ीद इस्लाम के नाम पर अपनी हुकूमत का नंगा नाच, नाच रहा था उसके डर से एक तिहाई दुनिया अपना सर उसके सामने झुका चुकी थी वो चाहता था कि हुसैन[अ०] भी उससे हाथ मिला लें उसके सामने अपना सर झुका दें। हुसैनअ० का हाथ तो बढ़ा मगर यज़ीद के हाथ की तरफ़ नहीं बल्कि उसके चेहरे पर तमाचा बनकर। हुसैनअ० को अपने इन्कार का अन्जाम भी अच्छी तरह मालूम था वो जानते थे कि बदले में हमें, हमारे चाहने वालों और हमारे घर वालों को उसके हर तरह के ज़ुल्म (अत्याचार) का सामना करना पड़ेगा। हुआ भी वही सभी चाहने वालों के सार काट दिये गये भाई भतीजों भाँजों को शहीद कर दिया गया ज़ालिमों ने अपनी हैवानियत की हद कर दी, इन्सानियत के दुश्मनों ने हुसैन[अ०] के छः महीने के बच्चे को भी तीर से शहीद कर दिया घर की पर्देदार औरतों के सरों से चादर छीन ली कर्बला से कूफ़ा और कूफ़े से शाम तक रस्सी में जकड़ कर ले जाया गया। ये सब हुआ मगर हुसैन की इन्सानियत के नाम पर दी गयी ये कुर्बानी रंग लाई और तब से आज तक जब भी जहाँ भी हुसैनअ० के नाम पर इन्सानियत को आवाज़ दी जाती रही है इन्सानियत हुसैनअ० के झंडे (अलम) के नीचे एकजुट नज़र आती है।

हुसैनअ० के झण्डे (अलम) के नीचे आने वाला हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई, शिया, सुन्नी बाद में होता है सबसे पहले वो सिर्फ़ और सिर्फ़ इन्सान होता है।

यही है इन्सानियत की जीत — यही है हुसैनियत।



मुख्य समाचार

लखनऊ में इस्राईल के ख़िलाफ़ एहतेजाज

दुनिया का हर जुल्म ऐसे ही जूतों का मुस्तहक़: क़ाएदे मिल्लत मौलाना कल्बे जवाद

पहली जनवरी 2009ई० को क़ाएदे मिल्लत मौलाना कल्बे जवाद की क़यादत में अमरीका और इस्राईल की सीनाज़ोरी और फ़िलस्तीनियों पर बराबर हमलों की मज़म्मत और इराक़ी पत्रकार मुन्तजिर ज़ैदी को रिहा किये जाने के लिए कल्बे आबिद प्लाज़ा, लखनऊ के सामने अज़ीम मुज़ाहेरा हुआ जिसमें कसीर तादाद में मुसलमानों ने शिरकत करते हुए अमरीकी और इस्राईली झण्डे जलाये। मौलाना ने मुज़ाहरे के दौरान फ़रमाया कि अमरीका और इस्राईल फ़िलस्तीन पर जारिहाना हमले कर रहे हैं और हुकूमतें उनका पूरा साथ दे रही हैं। काएदे मिल्लत ने कहा कि किसी मुल्क की अवाम ज़ालिम की हिमायत नहीं करती अलबत्ता हुकूमतें ज़रूर उनके साथ हो जाती हैं। मौलाना ने अफ़सोस ज़ाहिर करते हुए कहा कि इस्लामी हुकूमतें भी अमरीका और इस्राईल जैसे ज़ालिम और जाबिर मुल्क की पिटठू बनी हुई हैं। मौलाना ने मीडिया से मुख़ातब होकर एक बयान में कहा कि हमारी सितम ज़रीफ़ी यह है कि हमारे दिफ़ाई इक़दामात को भी दहशतगर्दी कहकर बदनाम किया जाता है इस मौक़े पर मौलाना ने अपने बयान की वज़ाहत में कहा कि इस ज़माने में एक बड़ा अज़दहा अगर चिड़िया को निगलने की कोशिश करे तो वह उसका दिफ़ाई क़दम कहा जाता है और अगर चिड़िया अपनी चोंच से अपना बचाव करे तो दहशतगर्दी से ताबीर किया जाता है। क़ायदे मिल्लत ने कहा कि हालात बिलकुल ऐसे ही हैं कि अगर फ़िलस्तीन के मज़लूम अवाम अपना दिफ़ाअ् करते हैं तो उसको दहशतगर्दी का नाम लेकर उसकी मुख़ालेफ़त की जाती है और इस्राईली दहशतगर्दी की हिमायत की जा रही है जिन में हमारा अपना मुल्क भी अमरीका का पिटठू बना हुआ है मौलाना ने कहा कि बुश ने अकड़ कर सर उठा रखा था मुन्तज़िर ज़ैदी के जूतों ने आख़िरकार उसका सर नीचा कर दिया मौलाना ने कहा कि मुन्तज़िर ज़ैदी ने साबित कर दिया कि ज़ुल्म चाहे कितना बड़ा ताक़तवर क्यों न हो उसकी दहशतगर्दी ज़्यादा दिनों तक बर्दाश्त नहीं की जाती। मौलाना ने मुन्तज़िर ज़ैदी की रिहायी की माँग के साथ-साथ उनकी हिम्मत की तारीफ़ करते हुए कहा कि मुन्तज़िर ज़ैदी ने जो जूते मारे वह सिर्फ़ उन्होंने अपनी तरफ़ से नहीं बल्कि तमाम हक़ परस्तों और मज़लूमों की तरफ़ से मारे थे। इस मौक़े पर मौलाना ने कहा कि जो लोग कह रहे हैं कि इस काम को दोहराया न जाये वह अमरीका से अपनी वफ़ादारी का सुबूत दे रहे हैं ज़ैदी ने जो नेक रिवायत क़ायम की है उसको जारी रखा जाना चाहिये क्यों दुनिया का हर ज़ुल्म ऐसे ही जूतों के लायक़ है।

व्हाइट हाउस पर भी जूते मारे गये

मुन्तज़िर ज़ैदी के बुश पर मारे गये जूतों को इस्लामी दुनिया के अलावा यूरोपी मुमालिक ने भी सराहा है यही वजह है कि जिस कम्पनी का जूता मुन्तज़िर ज़ैदी ने बुश पर मारा था उस कम्पनी से जूते की माँग अमरीका से भी हुई और वह तादाद तक़रीबन बीस हज़ार है। जार्ज बुश की मग़रूर ज़हनियत को जूते की नोक पर रखने वाले मुन्तज़िर ज़ैदी की हिमायत में बुश की सदारत के आख़िरी दिन 20 जनवरी 2009ई० को जंग मुख़ालिफ़ मुज़ाहेरीनों ने व्हाइट हाउस पर जूते फेंके। जंग मुख़ालिफ़ मुज़ाहेरीन का कहना था कि वह इराक़ में राष्ट्रपति बुश पर जूते फेंकने वाले इराक़ी सहाफ़ी मुन्तज़िर ज़ैदी की हिमायत करते हैं और बुश की ग़लतियों का मुहासबा न करना अमरीकी क़ानून के ख़िलाफ़वर्ज़ी होगी इसलिए बुश की ग़लतियों का मुहासबा होना चाहिए।

जूतों की माँग में इज़ाफ़ा

14 दिसम्बर 2008ई० को इराक़ के बेबाक सहाफ़ी मुन्तज़िर जैदी ने अमरीकी राष्ट्रपति बुश को बग़दाद में प्रेस कान्फ्रेंस के दौरान जो जूते मारे वह इस क़दर मक़बूल हो गये हैं कि जूते बनाने वाली कम्पनी ने माँग में इज़ाफ़े की वजह से दूसरी कम्पनियों पर सबक़त हासिल कर ली है। कम्पनी ने इस जूते का नया नाम "बाए-बाए बुश" रख दिया है। बेदान शूज़ कम्पनी के मालिक रमज़ान बेदान हैं उन्होंने जूतों की माँग में ज़बरदस्त इज़ाफ़े की वजह से मज़ीद स्टाफ़ बढ़ा लिया है जो दिन रात जूते बनाने में मसरूफ़ हैं। रमज़ान बेदान के मुताबिक़ शुरु में मशिरक़े वुस्ता के मुमालिक से जूतों की आर्डर मिलना शुरु हुए थे मगर इसके बाद दुनियाभर से जूतों की माँग में ज़बरदस्त इज़ाफ़ा देखा गया है। एक लाख बीस हज़र के क़रीब इराक़ से जूतों की माँग की गई है।

इस्राईली दहशतगर्दी से फ़िलस्तीन की ज़मीन फिर लहूलुहान

इस्राईल ने ज़ुल्म और बरबरियत की उस वक़्त इन्तेहा कर दी कि जब मज़लूम फ़िलस्तीनियों की लाशों पर बुलडोज़र चलवाकर ज़मीन बराबर करवा दी। उसने अक़्वामे मुत्तहेदा की जंगबन्दी की अपील भी ठुकरा दी। अक़्वामे मुत्तहेदा के सिक्रेट्री जनरल बानकी मून ने कहा कि ग़ज़्ज़ा में फ़ौरन जंग बन्दी करने से मुताल्लिक़ सलामती काउन्सिल की क़रारदाद नज़रअन्दाज़ किये जाने से उन्हें ज़बरदस्त मायूसी हुई है। उन्होंने कहा कि ग़ज़्ज़ा में बराबर तश्द्दुद हो रहा है जो कि सलामती काउन्सिल की क़रारदाद की खुली हुई ख़िलाफ़वर्ज़ी है।

इस्राईल ने फ़िलस्तीनी जंगजुओं की लाशों पर बुलडोज़र चलाकर उनके ढेर लगा दिये। यह बात उस फ़िलस्तीनी ने बतायी है जिसे इस्राईली फ़ौजियों ने ग़ज़्ज़ा में पकड़ लिया था इस शख़्स को 5 रोज़ तक हिरासत में रखने के बाद इस्राईल ने छोड़ दिया था उसने बताया कि वह बुलडोज़र के ज़रिये लाशों का अम्बार लगा रहे थे उनमें मुतअद्दिद जंगजुओं की लाशें थीं। इस्राईल फ़ौज के तर्जुमान ने कहा कि उसे किसी वाक़िए का इल्म नहीं है। फ़िलस्तीनी ने अपना नाम अयाज़ बताया है उसने कहा कि उसने शिमाली ग़ज़्ज़ा के शहर बैतुल्लाहिया में उन लाशों को देखा था जहाँ इस्राईल ने एक हफ़्ते के फ़िज़ाइ हमलों के बाद ज़मीनी हमले का आग़ाज़ किया था। हमास ने यह इन्केशाफ़ नहीं किया कि ग़ज़्ज़ा के कितने लड़ाकू हलाक और ज़ख़्मी हुए हैं। इस्राईली फ़ौज ने ग़ज़्ज़ा पट्टी में दाख़िल होने वाले सैकड़ों फ़िलस्तीनियों को उस वक़्त गिरफ़्तार कर लिया था जब वह कार्यवाही के लिए ग़ज़्ज़ा पट्टी में आगे बढ़ रहे थे। हुकूमत का कहना है कि इस कार्यवाही का मक़सद हमास को कुचलना है और इस्राईल के अन्दर राकेट हमलों को रोकना है। जिन 200 लोगों को बैतुल्लाहिया में पकड़ा गया उनमें से 72 को जुमा के रोज़ आज़ाद कर दिया गया। वह कमज़ोर और थके हुए नज़र आ रहे थे वह नंगे पैर थे और वह परीज़ क्रासिंग के रास्ते ग़ज़्ज़ा पट्टी में दाख़िल हुए। अयाज़ ने बताया कि उन्हें फ़ौज के मोर्चों में 'इन्सानी ढाल' के तौर पर इस्तेमाल किया गया था बाद में उन्हें इस्राईल की जेल में भेज दिया गया। उन्होंने बताया 'ज़मीनी हमले' के पहले दिन ख़ुसूसी फ़ोर्सेज़ बैतुल्लाहिया में घुस गयीं एक हज़ार के क़रीब फ़ौजी छतों पर उतर आये और उन्होंने लोगों को पकड़ना शुरु कर दिया। उन्होंने कई मकानों को तबाह कर दिया उनका कहना था यहाँ से राकेट फेंके जाते थे। हिरासत में लिये जाने के बाद फिलस्तीनियों से पूछताछ की गई कि राकेट कौन फ़ायर करता था और किसने सुरंगें खोदी थीं तो उन्होंने बताया कि पहले उन्होंने हमें ग़ज़्ज़ा पट्टी के अन्दर फ़ौजी मार्चों में इन्सानी ढाल के तौर पर इस्तेमाल किया इसके बाद हमें बेरशीबा की जेल में क़ैद कर दिया'। वह हमें बरहना करके पत्थरों या रेत पर सुलाते थे। 5 रोज़ गिरफ़्तारी के दौरान हर रोज़ नये क़ैदी लाये जाते थे। इस्राईल ने 27 दिसम्बर को ग़ज़्ज़ा पर हमला किया था जब हमास ने 6 माह से जारी जंग बन्दी यह कहकर तोड़ दी थी कि इस्राईल ने ग़ज़्ज़ा की नाका बन्दी ख़त्म करने का वादा पूरा नहीं किया है। इसके बाद उन्होंने राकेट दाग़ने शुरु कर दिये थे। ग़ज़्ज़ा पट्टी इलाक़े में इस्राईली हमलों से इस बार मरने वालों की तादाद सैकड़ों में पहुँच गई है। ग़ज़्ज़ा में जंग बन्दी की बार-बार अपील करने के बावजूद इस्राईल के ध्यान न देने पर अक़्वामे मुत्तहेदा के सिक्रेट्री बानकी मून ने मायूसी ज़ाहिर की है। 27 दिसम्बर से जारी इस सिलसिलेवार हमले में अब तक सैकड़ों मकान, सरकारी इमारतें, मसाजिद, सेक्योरिटी तन्सीबात तबाह हो चुकी हैं। कई बरसों के बाद ये इस्राईल का सबसे शदीद हमला है जिसमें इतनी जानों का नुक़सान हुआ है।

Permanent Namaz Timing As Per Lucknow Horizon

Month March 2009

मार्च	र० अव्वल	दिन	फ़ज्र	तुलूअ	ज़ोहर	ग़ुरूब	मग़रिब	लखनऊ से पहले		लखनऊ के बाद	
1	3	इतवार	5:13	6:30	12:19	6:08	6:18	इलाहाबाद	5	अहमदाबाद	32
2	4	पीर	5:12	6:29	12:19	6:08	6:18	आज़मगढ़	9	आगरा	12
3	5	मंगल	5:11	6:28	12:19	6:09	6:19	अयोध्या	5	इन्दौर	21
4	6	बुध	5:10	6:27	12:19	6:09	6:19	बाराबंकी	2	उन्नाव	2
5	7	जुमेरात	5:09	6:26	12:18	6:10	6:20	बस्ती	8	कन्नौज	8
6	[redacted]	जुमा	5:08	6:25	12:18	6:10	6:20	बनारस	8	बरेली	6
7	9	सनीचर	5:07	6:24	12:18	6:11	6:21	बलिया	12	मुम्बई	23
8	10	इतवार	5:06	6:23	12:18	6:12	6:22	बहराइच	4	बिजनौर	17
9	11	पीर	5:05	6:22	12:18	6:12	6:22	गोंडा	6	भोपाल	14
10	12	मंगल	5:04	6:21	12:17	6:13	6:23	अकबरपुर	6	पीलीभीत	5
11	13	बुध	5:04	6:20	12:17	6:13	6:23	पटना	18	झांसी	10
12	14	जुमेरात	5:03	6:19	12:17	6:13	6:23	प्रतापगढ़	5	फ़िरोज़ाबाद	10
13	15	जुमा	5:02	6:18	12:17	6:14	6:24	पुर्निया	27	दिल्ली	15
14	16	सनीचर	5:01	6:17	12:17	6:14	6:24	जौनपुर	8	जैतपुर	12
15	17	इतवार	5:00	6:16	12:16	6:15	6:25	बरौनी	20	रामपुर	8
16	18	पीर	4:59	6:16	12:16	6:15	6:25	रांची	18	श्रीनगर	21
17	19	मंगल	4:58	6:13	12:15	6:16	6:26	गया	16	सहारनपुर	14
18	20	बुध	4:57	6:12	12:15	6:17	6:27	रायबरेली	4	सीतापुर	4
19	21	जुमेरात	4:55	6:11	12:15	6:17	6:27	सीवान	14	शाहजहाँपुर	4
20	22	जुमा	4:53	6:10	12:14	6:18	6:28	24 परगना	30	अलीगढ़	12
21	23	सनीचर	4:52	6:09	12:14	6:18	6:28	ग़ाज़ीपुर	11	फ़तेहपुर	3
22	24	इतवार	4:51	6:08	12:14	6:18	6:28	फ़ैज़ाबाद	5	कानपुर	3
23	25	पीर	4:50	6:07	12:13	6:19	6:29	कोलकाता	31	ग्वालियर	12
24	26	मंगल	4:49	6:06	12:13	6:19	6:29	जौरी	1	मथुरा	3
25	27	बुध	4:48	6:05	12:13	6:20	6:30	गोण्डा	4	मुरादाबाद	9
26	28	जुमेरात	4:47	6:03	12:12	6:20	6:30	गोरखपुर	10	मेरठ	13
27	29	जुमा	4:46	6:02	12:12	6:21	6:31	चक	11	मुज़फ़्फ़रनगर	12
28	1 र० सानी	सनीचर	4:44	6:01	12:11	6:22	6:32	मुंगेर	12	नागपुर	16
29	2	इतवार	4:42	6:00	12:11	6:22	6:32	मिर्ज़ापुर	7	नैनीताल	6
30	3	पीर	4:40	5:59	12:10	6:23	6:33	मुज़फ़्फ़रपुर	19	हरदोई	4